

महात्मा गाँधी एवं अम्बेडकर के विचारों में दलित विमर्श

¹ विवेक कुमार, ² अवधेश कुमार

¹ शोध छात्र, राजनीति शास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

² प्रवक्ता, राजनीति विज्ञान विभाग, जगत तारन महिला महाविद्यालय, इलाहाबाद।

सारांश

इस शोध पत्र में मैंने दलित आन्दोलन एवं उनके उपर महात्मा गाँधी एवं अम्बेडकर के विचारों में दलित विमर्श का अध्ययन किया है। राजनीतिक संगठन की स्थापना के पीछे विभिन्न कारक राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, क्षेत्र, भाषा तथा प्रजाति हो सकते हैं। जिसके आधार पर वे जनता से जुड़ते हैं तथा जनता के मध्य अपने मतो, विचारों और मान्यताओं का प्रचार-प्रसार करते हैं और फिर राजनीति में भाग लेकर सत्ता प्राप्ति का प्रयास करते हैं। अपने विचारों तथा मान्यताओं को सर्वव्यापी बनाने की कोशिश करते हैं। ऐसा ही काम कांग्रेस आजादी से पहले से लेकर आज तक एक राजनीतिक दल की हैसियत से कर रही है तथा नब्बे के दशक में एक वर्गीय हित यानि दलित हित को आधार बना कर राजनीतिक मंच पर आने वाली पार्टी बसपा भी आज सर्वजन के मुद्दों की बाते करने लगी है।

मूल शब्द: राज्य, सामाजिक आन्दोलन, दलित आन्दोलन, महात्मा गाँधी अम्बेडकर, राजनीतिक विमर्श

प्रस्तावना

20वीं सदी में डॉ० अम्बेडकर मानवाधिकार के क्षेत्र में ऐसे व्यक्ति के रूप में सक्रिय हुए जिन्होंने समाज को गहराई से प्रभावित किया। डॉ० अम्बेडकर की सक्रियता समाज के स्तर पर समाज की तकलीफ को समझना और निराकरण करना, यह एक विशाल चुनौती है। डॉ० अम्बेडकर के सामने इतना बड़ा दलित वर्ग था जिसकी यातना को उन्होंने खुद महसूस किया था। उस वर्ग की पीड़ा उनकी अपनी थी उनकी पीड़ा पूरे उस वर्ग की थी जो इस देश का बहुत बड़ा अंग था। पीड़ा का निराकरण तभी हो सकता है। जब मनुष्य उसका साक्षात्कार स्वयं अपने अन्दर करें। अम्बेडकर ने अपने सरोकारों को समष्टि से जोड़ा और उनकी इस करुणा को बुद्ध के सन्दर्भ में देखा जाये तभी हम अनुभव कर सकते हैं कि डॉ० अम्बेडकर अपने अन्दर की तकलीफ को अपने तक सीमित न रखकर समष्टि से जोड़ दिया था। मानव तभी मानव बनता है जब करुणा के भाव से उसे परखता है। यही कारण था कि अम्बेडकर दलित मुक्ति के लिए जो संघर्ष कर रहे थे, उसमें मनुवादी दासता को तोड़ने, जातीय जकड़न को कमजोर करने और सामाजिक गतिशीलता को बढ़ाने में बौद्ध दर्शन का बहुत बड़ा हाथ है। सबसे बड़ी बात यह है कि उनका मानवाधिकार सुधारवादी न होकर आत्ममुक्ति का आन्दोलन था जिसमें आत्ममुक्ति का अहसास उस व्यक्ति को भी हो सके, जो सामाजिक भेदभाव से सर्वाधिक प्रताड़ित है। डॉ० अम्बेडकर का दर्शन तथा राजनीतिक गतिविधियाँ दलित वर्ग के सामाजिक उत्थान तथा राजनीतिक चेतना से प्रेरित हैं। उन्होंने वर्ण व्यवस्था के विनाश का नारा दिया क्योंकि यह अमानवीय प्रथा अछूतों के सामाजिक उत्थान में सबसे बड़ी बाधा थी, अस्पृश्यता और जाति भेद निवारण के विषय में तथा आधुनिक भारत के निर्माताओं में डॉ० अम्बेडकर का भी गौरवपूर्ण स्थान है। उन्होंने भारत के दलित आन्दोलन को गतिशील बनाया और अछूतों, शूद्रों, हाशिए पर पटकें शोषित वर्गों की मुक्ति का मार्ग प्रशस्त किया इसलिए अब वे एक मसीहा व दलितों के मुक्तिदाता माने जाते हैं।

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान वे सर्वाधिक चर्चित और विवादों से घिरे व्यक्ति थे। आज उन्हें आधुनिक भारत का युग पुरुष कहा जाता

है। दलित आन्दोलन एवं अछूतोंद्वारा के संदर्भ में हमें इनके योगदान का बिना किसी पूर्वाग्रह के अध्ययन करना चाहिए। डॉ० अम्बेडकर ने अमेरिका और लंदन से उच्च शिक्षा समाप्त करने के पश्चात पहले तो मंदिर प्रवेश, सार्वजनिक जलाशयों से अछूतों द्वारा पीने का पानी लेने, कुरीतियाँ मिटाने और जातीय संगठन बनाने के लिए अनेक कार्य किये, बाद में उन्होंने महसूस किया कि बिना सत्ता प्राप्त किये सामाजिक परिवर्तन असम्भव है।

ब्रिटिश सरकार अंग्रेजी शासन के विरोध में 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध तथा बीसवीं सदी के प्रारम्भ में राष्ट्रीय चेतना की प्रभावी प्रगति और व्यापक जन असंतोष से बेखबर नहीं थी। दिन प्रतिदिन स्वतंत्रता के लिए उदारवाद से उग्रवादी प्रयास होने लगे थे। पूर्ण स्वराज्य की मांग उठने लगी थी। कांग्रेस के सविनय अवज्ञा आन्दोलन और राजनीतिक गतिरोध समाप्त कराने की दृष्टि से एवं भारत को उत्तरदायी शासन सौंपने के लिए ही ब्रिटेन सरकार ने गोलमेज सम्मेलन लंदन में आयोजित किया। डॉ० अम्बेडकर दलित प्रतिनिधि के रूप में उसमें भाग लिया और दबे कुचले लोगों की आवाज लगाई। दलितों के सामाजिक, राजनीतिक, अधिकारों को प्राप्त करने के लिए डॉ० अम्बेडकर लंदन में धर्म युद्ध छेड़ा। डॉ० अम्बेडकर ने ब्रिटिश सरकार से दलित वर्गों के लिए पृथक प्रतिनिधित्व की मांग की। इस मांग का मकसद यह था कि दलितों के प्रतिनिधि सत्ता प्रतिष्ठानों में बैठकर दलितों के हितों में सोचें तथा उनकी समस्याओं को हल करेंगे। दलितों को अपनी मुक्ति के लिए सवर्ण प्रतिनिधियों पर निर्भर रहना नहीं पड़ेगा। तत्कालीन ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने इस मांग को स्वीकार कर लिया इतिहास में कम्प्यूनल अवार्ड के नाम से यह जाना जाता है। यहाँ कह सकते हैं कि जाति, अम्बेडकर के नेतृत्व में दलित राजनीति के केन्द्र में थी, पर इसके लिए मुख्य रूप से तत्कालीन राष्ट्रीय आन्दोलन जिम्मेदार था जिसका नेतृत्व पूँजीपतियों और सामन्तों के हाथों में था। दलित की मुक्ति के सवाल पर वे कतई गम्भीर नहीं थे। वे न तो ब्राह्मणवाद से टकराने को तैयार थे और नहीं सामाजिक परिवर्तन के पक्षधर थे पर डॉ० अम्बेडकर स्वतंत्र भारत में दलितों की क्या स्थिति होगी इस प्रश्न का हल जानना चाहते थे। क्या दलित

अस्पृश्य ही बने रहेंगे या उन्हें एक स्वतंत्र नागरिक के सभी अधिकार प्राप्त करेंगे?

‘कम्यूनल अवार्ड’ में दलितों के राजनीतिक प्रतिनिधित्व को गाँधी जी तथा हिन्दू नेताओं ने स्वीकार नहीं किया। महात्मा गाँधी उसके विरोध में आमरण अनशन पर बैठ गये और अन्तः भारी सामाजिक दबाव के बीच महात्मा गाँधी तथा डा० बी० आर० अम्बेडकर के बीच पूना में समझौता हुआ जिसमें पृथक अधिकारों की माँग को समाप्त कर शासन और प्रशासन में कुछ सीटें आरक्षित करने का निर्णय लिया गया। 24 सितम्बर, 1932 में हुआ यह समझौता ‘पूना पैक्ट’ के नाम से जाना जाता है। जब स्वतंत्रता ने भारत के द्वार पर दस्तक दी तब गाँधी जी, सरदार पटेल और नेहरू ने ही कांग्रेस और गाँधीवादी के दर्शन के प्रखर आलोचक डॉ० अम्बेडकर को ही भारतीय जनता की आकांक्षाओं और सपनों को पूरा करने के लिए भारतीय संविधान की रचना हेतु प्रस्तावित मसौदे की प्रारूप समिति का अध्यक्ष बनाने में पहल कर दूरदर्शिता का परिचय दिया, इससे डॉ० अम्बेडकर को भी दलितों का भावनाओं को संविधान की धाराओं में पिरोने का अद्वितीय स्वर्णिम अवसर प्राप्त हो गया जिसके लिए वे जीवन पर्यन्त संघर्ष करते रहे थे। यद्यपि सत्ता हस्तांतरण के समय ब्रिटिश सत्ता के कर्णधारों ने उन्हें पूर्णतया अलग-थलग कर दिया था आज यह विषय एक स्वतंत्र अध्ययन की अपेक्षा रखता है। तत्सम्बन्धी अति गोपनीय दस्तावेज और पत्र व्यवहार “भारतः सत्ता हस्तांतरण” ग्रंथमाला की जिल्दों में ब्रिटिश सरकार तीन दशक पूर्व प्रकाशित कर चुकी है।

गाँधी की प्रेरणा से संविधान रचना का जो गुरुत्तर भार उन्हें सौंपा गया था, उसे उन्होंने अपने अपूर्व पांडित्य और अद्वितीय मेधा के बल पर पूरा कर दिखाया। जिसकी संविधान सभा में काफी प्रशंसा हुई। उन्होंने ऐसा करके अपनी देशभक्ति और देशवासियों के प्रति असीम प्रेम का परिचय दिया। आने वाली पीढ़ियाँ उन्हें भारत में लोकतांत्रिक शक्तियों के प्रेरणता के रूप में याद करेंगीं। निश्चय ही वे आज भारत में लोकतंत्र के जनक और प्रहरी के सम्माननीय पद पर प्रतिष्ठित हो चुके हैं। यदि उनके चिंतन और अनुभव का लाभ देश की सबसे विकराल साम्प्रदायिक समस्या के हल करने में उठाया जाता तो निश्चय ही भारत विभाजन नहीं होता। देश का इतिहास ही दूसरा होता। एशिया का मानचित्र ही कुछ और ही होता।

राजनीतिक संगठनों के बहुआयामी चरित्र तथा राजनीतिक विकास की प्रक्रिया में उनकी भागीदारी से आये सामाजिक, राजनीतिक बदलाव का अध्ययन किया हूँ। राजनीतिक संगठन की स्थापना के पीछे विभिन्न कारक राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, क्षेत्र, भाषा तथा प्रजाति हो सकते हैं। जिसके आधार पर वे जनता से जुड़ते हैं तथा जनता के मध्य अपने मतों, विचारों और मान्यताओं का प्रचार-प्रसार करते हैं, और फिर राजनीति में भाग लेकर सत्ता प्राप्ति का प्रयास करते हैं। अपने विचारों तथा मान्यताओं को सर्वव्यापी बनाने की कोशिश करते हैं। ऐसा ही काम कांग्रेस आजादी से पहले से लेकर आज तक एक राजनीतिक दल की हैसियत से कर रही है तथा नब्बे के दशक में एक वर्गीय हित यानि दलित हित को आधार बना कर राजनीतिक मंच पर आने वाली पार्टी बसपा भी आज सर्वजन के मुद्दों की बातें करने लगी है। इस अध्ययन का महत्व इसलिए बढ़ जाता है कि यह कांग्रेस तथा बसपा के उन महत्वपूर्ण पहलुओं को परखने की कोशिश करता है जिससे दलित समाज कांग्रेस और बसपा से अपने को जोड़ते हैं तथा अलग करते हैं। कांग्रेस राजनीतिक संगठन साधारण तौर पर एक सामान्य उद्देश्य को लेकर स्थापित हुआ और फिर एक ऐसे आन्दोलन में बदल गया जो राष्ट्रीय आन्दोलन का पर्याय बना और देश की बागडोर सम्भाली तथा देश के बहुविविधता में समन्वय स्थापित करने का सफल प्रयास किया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ० अम्बेडकर जन्म शताब्दी वर्ष में विश्वविद्यालय अनुदानआयोग और भागलपुर विश्व की एक विचारगोष्ठी में कन्हैया लाल चंचरीक के अम्बेडकर और गाँधी व्याख्यान (20-24 मार्च 1992),।
2. बरमानी, आरसी, समकालीन राजनीतिक सिद्धान्त एवं चिंतन ‘गीतान्जली पब्लिकेशन हाउस 2009।
3. कुमार विवेक, ‘बहुजनसमाज पार्टी और संरचनात्मक परिवर्तन, सम्यक प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2007।
4. भारती कवल, मायावती और दलित आन्दोलन,’ रमणीका फाऊंडेशन, नयी दिल्ली, 2004।
5. राजकिशोर, दलित राजनीति की समस्याएं, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2006।
6. सत्यप्रेमी पुरुषोत्तम, ‘दलित साहित्य : रचना और विचार,’ अतीश प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1997।
7. पाई सुधा, ‘दलित एशोरशन एण्ड द आनफिनिश्ट डेमोक्रेटिक रिवोल्यूशन’ सेज पब्लिकेशन, नयी दिल्ली, 2012।